ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-8 No. 1 August 2020

कोरोना महामारी का ग्रामीण जीवन पर असर

पवन कुमार पाण्डेय, असिस्टेंट प्रोफेसर (गेस्ट), विनोद बिहारी महतो कोयलांचल यूनिवर्सिटी, धनबाद
Pandeypawan32@gmail.com
प्रभात कुमार, रिसर्च स्कॉलर, तेज़पुर यूनिवर्सिटी, असम
prabhatkumar5450@gmail.com

शोधसार

गाँव किसी भी देश की सबसे मूल भूत इकाई होते हैं. जहाँ के गाँव सुखी और समृद्ध होंगे वहाँ पूरा देश सुखी होगा. गाँधी के ग्राम स्वराज्य की अवधारणा यही थी. भारत की अधिसंख्यक आबादी आज भी गांवों में ही निवास करती है. आजादी के बाद देश में विकास की जो प्रक्रिया चली उसमें एक असंतुलन रहा . कुछ हिस्से काफी आगे निकल गए जबकि दूर सुदूर में बसे ग्रामीण इलाके विकास से वंचित रह गए. महानगरों में अवसर व सुविधाएँ गांवों की अपेक्षा ज्यादा थीं यही कारण रहा की गांवों से लोग धीरे - धीरे शहरों की ओर पलायन करने लगे. यद्यपि शहरों में भीड़ बढ़ने के कारण रहने की दिक्कतें आई. स्लम एरिया व झुग्गी झोपड़ियों में बिना किसी मूल भूत सुविधा के लोग रहने को विवश हो गए लेकिन पलायन की यह गति नहीं रुकी. जब कोरोना महामारी ने भीषण रूप लिया और लॉक डाउन के कारण लोग अपने अपने गांवों को लौटने लगे तब गाँव और शहर की बहस एक बार फिर से प्रासंगिक हो उठी है. अगर हमने गांवों के विकास और उन्हें आत्मनिर्भर बनाने पर ध्यान दिया होता तो आज ऐसी स्थिति का सामना नहीं करना पड़ता.कोरोना के कारण महानगरों से हुए पलायन ने शहरों और गाँव के बीच जो गहरी खाई है या कहें तो इंडिया और भारत के बीच की खाई को स्पष्ट रूप से दिखाया है. इसकी तुलना भारत - पाकिस्तान के विभाजन के के पलायन से की गई. श्रमिकों की दुर्दशा की जो तस्वीरें सामने आयीं उससे इस घटना की भयावहता का अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है. इनमें से अधिकांश मजदूर बिहार, उत्तर प्रदेश के गाँव से हैं जिनके पास कृषि योग्य पर्याप्त भूमि नहीं व आजीविका का कोई अन्य स्रोत नहीं. ऐसे में दाल - रोटी चलाने के लिए बाहर जाकर मेहनत करने के सिवा कोई अन्य विकल्प नहीं है. इस आलेख में हमने गांवों में कोरोना का असर किस तरह पड़ा है इसे जानने के लिए झारखंड और असम के एक-एक गांव को केस स्टडी के रूप में लिया है.

मूल शब्द - कोरोना महामारी, लॉक डाउन, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, आत्मनिर्भर, पलायन

प्रस्तावना

महामारी पर दुनिया के कई भाषाओं में काफी कुछ लिखा जा चुका है. फ्रेंच भाषा में अल्बेयर कामू की कृति 'प्लेग' सर्वाधिक चर्चित कृतियों में से एक कृति गिनी जाती है. कामू ने 'ओरान' शहर को केंद्रित कर यह उपन्यास लिखा है. इस उपन्यास में प्लेग से उपजने वाले भयानक त्रासदी को चित्रित किया गया है. ओरान शहर में अचानक मरे हुए चूहे दिखने लगते हैं. आरंभ में इस पर कोई ध्यान नहीं देता है, क्योंकि ये मरे हुए चूहे हैं. जब इन चूहों के कारण प्लेग जैसी बीमारी फैलती है तो हडकंप मच जाता है. महामारी सिर्फ महामारी नहीं होती, अपने साथ अव्यवस्था और गरीबी भी साथ लेकर आती है. 'ओरान' शहर में हर रोज मरने वालों की संख्या 30 के पार हो जाती है, तो शहर में लॉकडाउन की घोषणा कर दी जाती है. अल्बैर कामू ने महामारी को केंद्रित मानकर जिस उपन्यास को रचा है. उसका सारतत्व यह है कि मनुष्य अपने सामर्थ्य और शक्ति के बारे में हमेशा गलत आकलन करता है और उसका अस्तित्व भी उस चूहे की तरह है जो प्लेग की वजह से अचानक मरने लगता हैं. दरअसल हम सब के अंदर एक प्लेग होता है. हम इतने नाजुक है कि एक अदना सा

Copyright @ 2020 Authors

वायरस हमारे अस्तित्व को खत्म कर सकता है. महामारी को केंद्रीय भूमिका में रखकर कामू ने मनुष्य के अस्तित्व को लेकर सवाल खड़ा किया है.

भारतीय भाषाओं में भी महामारी को लेकर अनेक रचनाएं हैं और इन रचनाओं में तत्कालीन समाज में फैले महामारी से उत्पन्न परिस्थितियों का जबरदस्त चित्रण है. फणीश्वरनाथ रेणु के प्रसिद्ध उपन्यास 'मैला आंचल' में मलेरिया और कालाजार की त्रासदी के बीच ग्रामीण जीवन के दुखों का उल्लेख किया गया है. उपन्यास में डॉ प्रशांत का जिक्र है जो महामारी पर शोध करने गांव आता है.

हिंदी साहित्य में निराला ने अपनी आत्मकथा 'कुल्लीभाट' में 1918 के स्पेनिश फ्लू से हुई मौतों का जिक्र किया है. जिसमें उनकी पत्नी, एक साल की बेटी और परिवार के कई सदस्यों और रिश्तेदारों की जान चली गयी थीं. निराला ने लिखा था कि दाह संस्कार के लिए लकड़ियां कम पड़ जाती थीं और जहां तक नजर जाती थी गंगा के पानी में इंसानी लाशें ही लाशें दिखाई देती थीं. इस बीमारी ने पूरे भारत को अपने चपेट में ले लिया था. बेटी की याद में रचित 'सरोज स्मृति' तो हिंदी साहित्य की एक चर्चित कृति है. महामारी से देश की पांच प्रतिशत आबादी की मौत हो गयी थी. बंगला के प्रसिद्ध उपन्यासकार शरत चंद्र चट्टोपध्याय की पत्नी हिरण्यमयी देवी और उनके बेटे का 1908 में प्लेग से बर्मा प्रवास के दौरान मौत हो गयी थी. शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के 'श्रीकांत' उपन्यास में न सिर्फ़ उन्नीसवीं शताब्दी की इस प्लेग और कोरेंनटाइन (संगरोध) का उल्लेख उल्लेख हुआ है.

स्पेनिश फ्लू का मामला जून 1918 में मुंबई में सामने आया था. जून के अंतिम सप्ताह तक पूरे मुंबई को अपने चपेट में ले लिया. धीरे – धीरे यह पूरे देश में फैल गया. भारत के आजादी आंदोलन के अग्रदूत महात्मा गांधी को भी स्पेनिश फ्लू हो गया. न तो वह बोल पा रहे थे और न ही पढ़ पा रहे थे.

यही नहीं अगर कई कथेतर साहित्य की चर्चा की जाये, तब भी कई बातों का उल्लेख है. मुंबई में व्यापक पैमाने पर फैले प्लेग की चर्चा है. 1896 में मुंबई में प्लेग फैला. उन दिनों मुंबई में भारी संख्या में प्रवासी मजदूर रहा करते थे. 19 वीं सदी के अंत तक मुंबई भारत का व्यापारिक राजधानी बन चुका था. पूरे देश से लोग यहां काम करने आते हैं. आबादी का एक बड़ा हिस्सा प्रवासी मजदूरों का होता था. जब 1896 में प्लेग फैला तब पूरे मुंबई से प्रवासी मजदूरों का पलायन भी होने लगा. इस प्लेग के दौर में बम्बई में प्रति सप्ताह 1900 मौतें हुई थीं. जिस समय महामारी फैली थी. उस वक्त भारत का स्वतंत्रता संग्राम अपना गति पकड़ रहा था. महामारी की वजह से लोगों में काफी गुस्सा भी था. स्वतंत्रता पूर्व भारत के कई शहर में प्लेग तो कभी स्पेनिश फ्लू जैसे बीमारी के चपेट में आता रहा है.

हालांकि इन महामारियों ने भारत के चिकित्सा व्यवस्था को बदल कर रख दिया. अंग्रेज जमाने के स्वास्थ्य सेवाओं पर किताब लिख चुकी मेडिकल इतिहासकार मृदुला रमन्ना बताती है कि आरंभ में अंग्रेज अधिकारियों ने इस महामारी को भारत के गंदगी में रहने की आदत से जोड़ दिया. धीरे – धीरे यह बेकाबू होने लगा और लोगों को अस्पताल में भर्ती होना पड़ा. महामारी के पूर्व भारत में अस्पताल में एडमिट होने की परंपरा नहीं थी और आमतौर पर लोग आयुर्वैदिक दवा ही खाते थे. उन दिनों एंटीबॉयटीक भी नहीं आया था. इस महामारी की वजह से काफी लोगों की मौत होने लगी. इसके बाद कई जगह अस्पताल खुले और एक तरह से एलौपेथिक चिकित्सा पद्धति का प्रभाव बढने लगा. प्लेग महामारी से रोकथाम के लिए तीन लोगों की कमिटी बनी. आर्थर रोड में प्लेग के इलाज के लिए विशेष अस्पताल भी बना. प्लेग की महामारी ने भारत के चिकित्सा व्यवस्था को बदल कर रख दिया. अंग्रेज सरकार ने एक कानून बनाया और इस कानून में पश्चिमी देशों के दवा और

 Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-8 No. 1 August 2020

चिकित्सा पद्धति को ज्यादा मान्यता दी और भारत के आयुर्वैदिक व अन्य पारंपरक पद्धति हाशिये में चले गये.

अकाल व महामारी का जीवन पर बहुआयामी असर पड़ता है. इससे पैदा होने वाली आपातकालीन परिस्थितियां आम जनजीवन और शासन व्यवस्था को बुरी तरह प्रभावित करती है. पूर्वोत्तर भारत में बांस का फूल ऐसे ही एक मामूली चीज है, जिससे लोगों की जिंदगी तबाह हो जाती है. अनिल यादव की पुस्तक 'वह भी कोई देस है महराज' पूर्वोत्तर भारत पर लिखी गयी है. इस पुस्तक में बांस में ज्यादा फूल होने से कैसे मिजोरम में अलगाववाद के खतरे उत्पन्न हो जाते हैं. इस बात का जिक्र है. 50 साल बाद निकलने वाले बांस के फूलों के आते ही पूरे इलाके में चूहों का राज हो जाता है. बांस के फूल चूहों का सबसे पसंदीदा भोजन होता है. इसे खाने से उनकी प्रजनन क्षमता बढ़ गयी जिससे मिजोरम में मौतम यानी अकाल जैसी समस्या खड़ी हो जाती है और फिर इस अकाल ने मिजो विद्रोह जैसी समस्या को जन्म दिया. थोड़े ही दिनों में चूहों की एक लम्बी फ़ौज खड़ी हो जाती है. बांस के फूलों के ख़त्म होते ही चूहे धीरे - धीरे गांवों और खेतों में लगी फसलों पर भी धावा बोल देते हैं. जिससे अकाल जैसी समस्या पैदा होती है. फिर इस अकाल की वजह से मिजो विद्रोह होने की संभावना में वृद्धि हो जाती है.

मदर इंडिया फिल्म के एक दृश्य में गाँव में बाढ़ आने के कारण सबकुछ डूब गया है और लोग शहर की ओर पलायन करने लगे हैं. उस समय नरगिस को एक गीत गाते दिखाया गया है- दुनिया में गर आए हैं तो जीना ही पड़ेगा, जीवन अगर जहर है तो पीना ही पड़ेगा. यह गीत और यही स्थिति कमोबेश आज भी हमारे गांवों में बनी हुई है. इसमें कुछ ज्यादा फर्क नहीं आया है अब तक. महामारी हो, अकाल हो या बाढ़ जैसी कोई प्राकृतिक आपदा इसका सर्वाधिक प्रभाव उनपर होता है जो आर्थिक, सामाजिक तौर पर कमजोर हैं. इतिहास में ऐसे बहुतेरे उदाहरण दिखते हैं- 1943 में बिहार बंगाल में भीषण अकाल का सामना करना पड़ा जिसमें लाखों लोग मारे गए. आदमी तो क्या पशु पक्षी भी दाने दाने को तरस गए.

बाबा नागार्जुन ने तब लिखा-
कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।

कोरोना महामारी ने भी कुछ ऐसे ही हालात पैदा कर दिए. जिनके पास सबकुछ है उन्हें तो ज्यादा फर्क नहीं पड़ता लेकिन वे लोग जो ग्रामीण इलाकों में हैं, वे लोग जो अभाव ग्रस्त हैं उनका क्या ? लोगों के हाथ में जो रोजगार था वो चला गया. महीनों से सबकुछ बंद पड़ा है. बीमारी इतनी तेजी से फैल रही है कि हर कोई आतंकित है. कोरोना ने मनुष्य के जीवन पर बहुआयामी प्रभाव डाला है. लॉकडाउन के दौरान लोगों को आर्थिक तंगी का सामना करना पड़ा. वहीं मानसिक सेहत पर बुरा प्रभाव पड़ा. इस बीच लॉकडाउन के दौरान सरकार की कोशिश यही रही कि कैसे ऑनलाइन शिक्षा दी जाये. हिमाचल के कांगड़ा जिले के ज्वालामुखी में रहने वाले कुलदीप कुमार ने अपने घर के रोजगार का एकमात्र जरिया गाय को सिर्फ इसलिए बेच दिया क्योंकि स्मार्टफोन नहीं होने की वजह से उसके बच्चे ऑनलाइन शिक्षा नहीं प्राप्त कर पा रहे थे.

सिंहदाहा

Copyright @ 2020 Authors

यह गांव झारखंड के धनबाद जिले के तोपचांची प्रखंड में स्थित है. जिला मुख्यालय से 30 किलोमीटर स्थित इस गांव की आबादी करीब 3,000 की होगी. गांव में मुख्यत: लोगों की जीविका जातिगत पेशा पर आधारित है. गांव की बहुसंख्य आबादी नाई है और बाल काटने के पेशे से जुड़ी है. हालांकि नई पीढ़ी के लोग मजदूरी पर आश्रित हैं और साथ में जीविका चलाने के लिए कई छोटे – मोटे काम भी करते हैं. गांव की अन्य दूसरी बड़ी आबादी में ब्राह्मण और हलवाई हैं जो क्रमश: पूजा – पाठ और होटल – स्ट्रीट फूड के दुकान चलाने के व्यवसाय से जुड़े हुए हैं. आबादी का बड़ा हिस्सा गांव में ही रहकर रोजी – रोटी का जीविकोपार्जन करता हैं. वहीं युवा पीढ़ी के कुछ लोग दिल्ली, मुबंई और देश के अन्य महानगरों का रूख कर रहे हैं.

कोरोना से पहले गांव के लोग पैसे कमाने के लिए एक साथ कई काम करते थे. खराब मानसून और खेती के ज्यादा लागत के कारण पिछले चार साल से कृषिकार्य ठप है. परती पड़े खेतों में ईट भट्ठे का निर्माण रोजगार के नये विकल्प के रूप में उभर रहा है. धनबाद में कोयला प्रचुर मात्रा में मिलता है. इस वजह से पिछले कई सालों से यहां ईंट भट्ठे का निर्माण ने लघु उद्योग का रूप ले लिया है. प्रधानमंत्री आवास योजना से कई लाभुकों को पक्का मकान मिल रहा है. लिहाजा ईंट की मांग इलाके में बढ़ गयी है लेकिन कोरोना संकट की वजह से लोग पैसे का निवेश नहीं करना चाहते हैं. ऐसी परिस्थिति में यह काम रूका हुआ है और रोजगार का संकट बढ़ गया है. वहीं प्रशासन बेरोजगारी के बढ़ते खतरे को देखते हुए मनरेगा का काम शुरू कर दिया है. जिससे लोगों को हल्की राहत मिली है. उधर जो लोग कस्बाई इलाकों में ठेले चाट – स्ट्रीट फूड की दुकान चलाते थे उनकी हालत खराब है. अब वह सब्जी बेचने लगे हैं. सब्जियों के भाव पूरी तरह से जमीन पर गिरा हुआ है, क्योंकि गांव के सब्जी विक्रेता अब शहर तक अपना माल नहीं बेच पाते हैं. सप्लाई चेन पूरी तरह से टूट चुका है.

कई ऐसे परिवार हैं जो जिला मुख्यालय में स्थित शहरों में रहते थे. अब वह वापस गांवों में रहने लगे हैं. यह परिवर्तन बड़े पैमाने पर दिख रहा है. शहरों में किराये के मकान में रहने वाले लोगों के लिए वहां रहना दुष्कर हो गया है. आवागमन की सुविधा नहीं मिल पाने की वजह से सबसे खराब हालत दिहाड़ी मजदूरों की है. ऐसे मजदूर जो हर रोज नजदीक के शहर जाते थे और दिन भर काम कर वापस घर लौट जाते थे. उनके रास्ते बंद हो गये.

शुक्लाई

यह गाँव असम के बोडोलैंड इलाके के उदालगुड़ी जिले में अवस्थित है. लगभग 6000-7000 की जनसंख्या वाला यह गाँव मूलतः नेपाली लोगों का है. गाँव की अधिकांश जनसंख्या चाय और ताम्बूल की खेती पर निर्भर है. ज्यादातर लोगों के चाय के छोटे छोटे बागान हैं जहाँ से सीजन आने पर पत्तों को तोड़ वे मिलों में भेजते हैं. यहाँ के कुछ लोग कृषि, पशुपालन, छोटे – मोटे व्यवसाय, ट्रांसपोर्ट जैसे कार्यों में भी लगे हैं. साथ ही साथ कुछ लोग यहाँ से बाहर के नगरों में जा कर काम करते हैं और गाँव में अपने परिवार को पैसे भेजते हैं. बाहर जाने वाले लोगों में से कुछ बैंगलरू में रह कर सिक्यूरिटी, होटल में कुक या वेटर हैं. जो लोग गुवाहाटी में काम करते हैं वो किसी दुकान पर काम करते हैं, हेल्पर , होटल या मॉल आदि में कार्यरत हैं. लॉक डाउन के कारण काम बंद हो गया. गाँव लौटने पर उन्हें काम नहीं मिल रहा क्यूंकि उन्हें चाय पत्ती तोड़ने का काम नहीं आता. मार्च के अंत में चाय के पौधों में नई पत्तियां आने लगती हैं. यही समय होता है जब हरेक 4 दिन के अंतराल पर उनकी कोंपलों को तोड़ा जाए. इस कार्य में बहुत से मजदूर लगे होते हैं. यही उनकी जीविका का प्रमुख स्रोत होता है.

पूरे दिन काम करने पर उन्हें 200 रूपये के आस पास की मजदूरी मिलती है. पर इन दिनों चूँकि फैक्ट्री बंद है तो पत्तों की डिमांड नहीं...इस कारण अप्रैल के अंत तक जो नई नई पत्तियां आई सब बर्बाद हो

 Copyright @ 2020 Authors

गईं. जिनके छोटे छोटे बागान हैं उन्हें तो नुकसान हुआ ही पर चाय बगनिया मजदूरों के लिए ये बड़ा कठिन साबित हुआ जो दिहाड़ी मजदूरी पर काम करके अपना गुज़ारा चलाते हैं. जो लोग ट्रांसपोर्ट के बिज़नेस में हैं यानी की गाड़ी से माल ढुलाई का काम या पैसेंजर लेकर चलते हैं उन्हें भाड़ा मिलना बंद हो गया. राशन- पानी को छोड़ कर अन्य दूसरे व्यवसाय ठप्प पड़ गए...मसलन कई लोग जो छोटे मोटे होटल आदि चला कर अपना गुजर बसर कर रहे थे उनके लिए मुश्किल हो गयी. दीमाकुची जो इस इलाके का लोकल बाज़ार है वहाँ पर कर्फ्यू जैसा माहौल रहा. इससे पहले यहाँ पर सन्डे को लगने वाले बाज़ार में काफी चहल - पहल और खरीद बिक्री होती थी. पर इन दिनों यहाँ की सारी गतिविधियाँ लगभग शांत हैं. इन दो उदाहरणों के माध्यम से हम यह समझने की कोशिश कर रहे थे कि कोरोना ने भारत के ग्रामीण समाज पर क्या असर डाला है.

लोग पलायन क्यूँ करते हैं ?

आमतौर पर अपने रोजमर्रे के जीवन में पड़ने वाले आपातकालीन परिस्थितियों के दौरान लोग कर्ज ले लेते हैं, कई बार वह पैसे वापस लौटाने में असमर्थ हो जाते हैं. इसके लिए वह महानगरों में कूच करते हैं. गांवों में लगातार रोजगार नहीं मिल पाता है. उनके जीवन में नकद पैसे की जरूरत महसूस होती है. जो गांव नहीं दे पाता है, शहर में उनकी यह जरूरत पूरी हो जाती है. महीने में जो पगार मिलता है उसे वह अपने घर भेज देते हैं. इस पैसे से घर के छोटे – मोटे काम संपन्न होते हैं.

बड़े – बड़े महानगर मजदूरों को अच्छा जीवन स्तर देने में विफल रहे हैं. वहां का जीवन यापन का खर्च भी ज्यादा होता है. उनका कोई सामाजिक जीवन भी स्तरीय नहीं हो पाता है. पहचान पत्र व स्थायी पता नहीं होने की वजह से वे सरकारी सुविधाओं का लाभ भी नहीं ले पाते हैं. ऐसे स्थिति में जरूरत है छोटे – छोटे सुविधा संपन्न कस्बों के निर्माण का और उसका कमान स्थानीय हाथों में देना चाहिए है. पूर्व आई पी एस अधिकारी विभूति नारायण राय ने 2 जून 2020 को हिंदुस्तान अख़बार में लिखे अपने लेख जिसका शीर्षक है- " भविष्य गाँव नहीं शहर ही हैं" में कहते हैं शहरों की तरफ पलायन सिर्फ़ आर्थिक कारणों से नहीं होता. शहर और बाज़ार दरअसल दलितों पिछड़ों को एक मनुष्य की पहचान देते हैं. वे भारतीय गांवों को लेकर चली गाँधी और आंबेडकर की ऐतिहासिक बहस का जिक्र किया है. गाँधी के लिए गाँव स्वर्ग थे और जो कुछ कुरूप तत्कालीन समाज में था वह सिर्फ़ आधुनिक तकनीक की वजह से था. गांधी के विचार को सिरे से खारिज करते हुए आंबेडकर ने भारतीय गाँव को साक्षात नरक बताया. उन्होंने लिखा गाँधी अगर अछूत परिवार में पैदा हुए होते तब उन्हें इस स्वर्ग की असलियत पता चलता.
आजादी के बाद कभी ऐसा नहीं हुआ कि मनुष्यों के रहने लायक शहर बसाने के प्रयास किए जाये. स्लमों को हटाकर वहां साफ - सुथरी रिहाइशें बसाने की कोशिश नहीं की गयी. इसकी जगह स्लम में बिजली पानी जैसी सुविधाएँ देने की बातें राजनैतिक-आर्थिक रूप से ज्यादा फायदेमंद थीं इसीलिए उसी की बातें होती रही . ऐसे में किसी सरकार का यह सोचना की वह सारे श्रमिकों को गाँव में ही रोक लेगी और रोज़गार उपलब्ध करा देगी इतना आसान नहीं दिखता. गाँव का मोह त्याग कर हमें छोटे छोटे नगर बसाने की सोचना चाहिए. चंडीगढ़ या जमशेदपुर जैसे कुछ प्लान किए गए नगर यहाँ की तस्वीर बदल देते. यहाँ पैदा होने वाले रोज़गार बाहर की ओर होने वाले पलायन को भी रोकते.

ग्रामीण विकास मंत्रालय की वेबसाइट में दर्ज आंकड़े के मुताबिक देश की 68 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है. ग्रामीण आबादी की वृद्धि दर 12 प्रतिशत है. सरकार ने गांवों में बदलाव लाने के उद्देश्य से 21 फरवरी, 2016 को रुर्बन मिशन लांच किया था. इसका मुख्य उद्देश्य कस्बाई सुविधा वाले छोटे –

 Copyright @ 2020 Authors

छोटे नगरों का निर्माण करना था. श्यामा प्रसाद मुखर्जी नेशनल रुर्बन मिशन (SPMRM) नाम से चलाये जा रहे योजना ने 21 फरवरी, 2020 को अपने चार साल पूरे किए.

श्यामा प्रसाद मुखर्जी नेशनल रुर्बन मिशन, लोकेशन प्लानिंग पर आधारित क्लस्टर विकास मॉडल है. यह देश भर में ग्रामीण समूहों की पहचान करता है, जहां शहरीकरण के बढ़ते संकेत जैसे कि शहरी घनत्व में वृद्धि, गैर-कृषि रोजगार के उच्च स्तर, बढ़ती हुई आर्थिक गतिविधि और शहरीकरण के अन्य लक्षण पाए जाते हैं. इस मिशन का उद्देश्य स्थानीय स्तर पर आर्थिक विकास को एक नई गति प्रदान करना है. यह बुनियादी सेवाओं को बढ़ाकर और अच्छी तरह से संगठित ग्रामीण समूहों का निर्माण करके इन ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक परिवर्तन प्रदान के उद्देश्य से इस योजना की शुरुआत की गयी है.

कोरोना से उपजे संकट

पिछले दो तीन महीनों में मीडिया में कई ख़बरें ऐसी आईं जिसे पढ़कर भारत और इंडिया के बीच कितना अंतर है ये साफ़ तौर पर स्पष्ट हो जाता है. उदाहरण के तौर पर-

Indian migrant deaths: 16 sleeping workers run over by a train (bbc.com,8 May 2020). Migrant Couple On 700-km Cycle Journey Home Run Over, Children Injured (ndtv.com, 8 May 2020).Fifteen-year-old in India cycles 745 miles home with disabled father on a bike (theguardian.com, 24 May 2020). Baby Tries To Wake Dead Mother at Bihar Station In Endless Migrant Crisis(ndtv.com,27 May 2020).

ये ख़बरें तो महज एक बानगी है उस भारत के तस्वीर की जहाँ कोई चकाचौंध नहीं...बल्कि एक स्याह अँधेरा है. अभी भी ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मूल आधार कृषि है. लोग इसके साथ साथ पशुपालन, डेयरी जैसे कुछ अन्य कार्य करते हैं. कोरोना के समय में जब सरकार ने हर जिले और राज्यों के बॉर्डर सील करने के आदेश दिए तो इसका असर काफी नकारात्मक हुआ. जब फल सब्जियां बाहर की मंडियों में बिकती थीं तब इनपर ज्यादा भाव मिलता था लेकिन अब चूँकि माल बाहर सप्लाई होना बहुत कम हो गया तो इसका रेट गिरने लगा. सिर्फ लोकल बाजार तक ही सीमित होने के कारण दाम में बेतहाशा गिरावट आ गयी. किसानों को भारी आर्थिक नुकसान हुआ और उन्हें अपनी लागत तक भी नहीं वसूल हो पाई. कृषक जीवन का चित्रण करते हुए पन्त ने जो कविता लिखी 1940 में वह आज भी प्रासंगिक लगती है.

अंधकार की गुहा सरीखी
उन आँखों से डरता है मन,
भरा दूर तक उनमें दारुण
दैन्य दुख का नीरव रोदन!
अह, अथाह नैराश्य, विवशता का
उनमें भीषण सूनापन,
मानव के पाशव पीड़न का
देतीं वे निर्मम विज्ञापन!

सरकार आत्म निर्भर भारत की बात कर तो रही है लेकिन आजादी से लेकर अब तक भारत के गाँव को आत्मनिर्भर नहीं बना सकी है. लोगों को पर्याप्त रोजगार नहीं मुहैया करा सकी है. एक तो पहले से ही बेरोजगारी की समस्या थी और अभी बाहर से जो लोग आये हैं सरकार के पास उनके लिए कोई काम नहीं. हमने भला कब इस बात पर ध्यान दिया कि गाँव में रोजगार का सृजन कैसे हो? मनरेगा जैसी

 Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-8 No. 1 August 2020

योजनाओं में भ्रष्टाचार की कहानियाँ किसी से छिपी नहीं. ऐसे में जो भूमिहीन किसान हैं उनका गुजारा कैसे हो.

एक ओर जहाँ शहरी इलाके और महानगरों में रहने वाले बच्चे ऑनलाइन माध्यमों के द्वारा अपनी पढाई कर रहे थे तो वहीं दूसरी ग्रामीण इलाकों के बच्चे ऑनलाइन लर्निंग नहीं कर पा रहे. नेटवर्क नहीं है लैपटॉप और स्मार्टफोन नहीं है डेटा की समस्या है. स्कूल, कोचिंग लम्बे समय से बंद हैं. इससे उनकी पढाई पर बुरा असर हुआ है. जिनके सामने सबसे बड़ी चुनौती खुद को और अपने परिवार को जिन्दा रखने की हो आखिर उनके लिए तो पढाई लिखाई किसी लक्ज़री से कम नहीं.

गाँव में जमीन से जुड़े विवाद लगातार बढ़ रहे हैं. जब बाहर राज्यों में काम करने वाले लोग अपने गाँव लौटे तो जमीन जायदाद के मामलों में विवाद बढ़ जाते हैं. इसका मूल कारण हमें समझना होगा. आबादी बढ़ रही है पर जमीन का आकार नहीं बढ़ सकता. गंगा के मैदानी इलाकों में बसे राज्यों का जनसंख्या घनत्व इतना ज्यादा है की यहाँ हर तरह के संसाधन कम पड़ जाते हैं. एक एक इंच जमीन के लिए सालों साल तक कोर्ट में झगड़े चलते रहते हैं. अगर इस जनसंख्या विस्फोट पर ध्यान न दिया गया तो भयावह स्थिति उत्पन्न हो सकती है.

कोरोना से पैदा आर्थिक संकट से निपटने के लिए सरकार के उपाय

सरकार ने कोरोना महामारी से निपटने के लिए कई बड़ी घोषणाएं की और कहा है कि वह खाद्य सुरक्षा कानून के तहत आने वाले लगभग 80 करोड़ लोगों को मिलने वाले खाद्यान्न को तीन महीने के लिए दोगुना करेगी और हर परिवार को हर महीने एक किलो दाल भी उपलब्ध कराएगी. " इस मदद से लोगों की तकलीफ कम हुई है.सरकार ने यह भी कहा है कि वह प्रधानमंत्री उज्जवला योजना के लाभार्थियों को तीन महीने के लिए हर महीने एक मुफ़्त कुकिंग गैस सिलेंडर देगी. यह योजना 2016 में शुरू हुई थी और इसमें ग़रीबी की रेखा से नीचे के परिवारों की महिलाओं को कुकिंग गैस सिलेंडर दिए गए थे.

प्रवासी मजदूरों से बातचीत करने से पता चलता है कि इस संकट ने महानगरों के प्रति उनके नजरिये को बदल कर रख दिया है. अब वह महानगरों की बजाय जिला मुख्यालय या राजधानी में ही रहना चाहते हैं ताकि भविष्य में होने वाले संकटों से बचा जा सके. ऐसी परिस्थिति में जब ज्यादातर लोग अपने जिला मुख्यालय या राजधानी में ही काम मांगेगे तो फिर उनके दैनिक भत्ते में गिरावट होगी. संभवत: उन्हें पहले की तरह पैसे नहीं मिले, क्योंकि काम करने वालों की भीड़ बढ़ जायेगी. इससे उनके जीवन में दुश्वारियां बढ़ सकती है.

संकट के साथ बदलाव का मौका

भारत के गांवों में पहले से ही खेती पर निर्भरता लगातार खत्म हो रही है. लोग रोजगार का नये विकल्प तलाश ले रहे हैं. कोविड – 19 महामारी के फैलने के बाद इस पर बदलाव के संकेत अभी से दिखने लगे हैं. ग्रामीण अर्थव्यवस्था ऐसे मुहाने पर खड़ा है जहां से बदलाव की बड़ी इबारत लिखी जा सकती है. महानगरों से लोग वापस अपने पैतृक गांवों में आ रहे हैं. हालांकि महानगरों तक पलायन की सबकी अपनी – अपनी वजह होती है. कोई ठोस रोजगार की तलाश में जाते हैं तो कई लोग अल्पकालिक अवधि के लिए पलायन करते हैं.

खराब हालातों के बीच अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने की कोशिशें की जा सकती है. झारखंड सहित देश के कई राज्यों के कोरेंटाइन सेंटर में फॉर्म भी भरवाये जा रहे हैं. जिससे स्पष्ट रूप से आंकड़े का पता चल सके कि प्रवासी मजदूर कहां से आये हैं. उनका क्या स्किल है? उनकी आमदनी कितनी है ? इस

Copyright @ 2020 Authors

डेटाबेस का रोजगार सृजन के योजनाओं के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है. रोजगार के संकट को जिला मुख्यालय और कस्बाई शहरों में निवेश कर दूर किया जा सकता है. वापस लौट रहे श्रमिकों में कई श्रमिक ऐसे भी होंगे जो स्किल्ड होंगे. स्किल्ड श्रमिकों की पहचान कर उन्हें छोटे उद्यमों को स्थापित करने का मौका देना चाहिए. इसके लिए पर्याप्त धन की जरूरत पड़ सकती है. सरकार को यह देखना होगा कि किस जिले में किस चीज की संभावना है और वहां निर्मित वस्तुओं को किस बाजार में खपाया जा सकता है.

जो लोग वापस गांव लौटे हैं, वह गांव में रोजगार की बजाय उद्यम लगाने की सोचते हैं. ऐसे मौके पर जब कोरोना से अनिश्चितता का माहौल बन चुका है. उद्यम लगाने के लिए पैसे की जरूरत होती है. ऐसी परिस्थिति में उनके पास कोई फंडिंग एजेंसी नहीं होती है जो उन्हें मदद कर सके.हर इलाके में कुछ परंपरागत व्यवसाय होते हैं साथ ही उसकी भौगोलिक स्थिति को देखते हुए ऐसे व्यवसाय को बढ़ावा देना चाहिए जो वहां के लिए फिट बैठता हो. इसे चिन्हित करने का काम अभी से होना चाहिए. झारखंड के गुमला में पत्रकार दुर्जय पासवान का कहना है कि कोरोना के बाद सबसे ज्यादा दिक्कत प्रवासी मजदूरों को हुई है क्योंकि मनरेगा में काम उन्हें ही मिल रहा है जो पहले से इस योजना के तहत रोजगार में लगे हुए. इस बार खेती में जुटे किसान कर्ज में डूब जायेंगे क्योंकि उनके पास बीज खरीदने से लेकर खेतीकार्य करने तक के पैसे नहीं है.

गांवों में पॉपुलेशन मैनेजमेंट की ओर ध्यान देने की आवश्यकता है. कितनी आबादी है, उसे किस तरह की स्किल की ट्रेनिंग दी जाए जो आज के समय के अनुकूल हो. उदाहरण के तौर पे नर्सिंग , हेल्थ केयर, हॉस्पिटैलिटी सेक्टर, योग, लाइफस्टाइल सेक्टर में भारी मांग है. लेकिन आज भी अधिकांश जनसंख्या कृषि में जुटी है. बिहार जैसे राज्यों को अपनी आबादी का व्यापक अध्ययन करना चाहिए. पहली बात की जनसंख्या नियंत्रण किया जाए, दूसरी बात स्किल को मार्केट की डिमांड के अनुरूप बनाया जाए ताकि लोकल लेवल पर रोजगार उत्पन्न किया जा सके. कृषि आधारित छोटे उद्योग जैसे- फूलों की खेती, फलों के प्रसंस्कृत जूस, आयुर्वेदिक औषधियों की खेती, केले- कटहल आदि का चिप्स निर्माण, मशरूम उत्पादन, सिल्क उत्पादन ,हैंडलूम सेक्टर, खादी ग्रामोद्योग, मत्स्य , डेरी, शहद उत्पादन जैसे कई उद्योग हर गाँव में विकसित किए जा सकते हैं.

सार

महामारी हो या कोई अन्य आपदा इसका सर्वाधिक दंश उन लोगों को झेलना पड़ता है जिनकी आर्थिक स्थिति पहले से कमजोर हो. उनकी सारी जमा पूँजी बीमारी, बाढ़, आपदा आदि से लड़ने में चली जाती है. पेट भरना और किसी तरह खुद को जिन्दा रखना ही सबसे बड़ी चुनौती होती है. भारत के दूर सुदूर में बसे अनेक गांवों की यही कहानी है जहाँ विकास आज भी महज एक सपना ही है. यही कारण है की गांवों से शहरों की ओर पलायन रुकने का नाम ही नहीं लेता. अंतर्राष्ट्रीय मंच पर भले भारत सुपर पॉवर बनने की चाहत रखता हो लेकिन एक कड़वी सच्चाई यह है की आज भी देश में भारी गरीबी और आर्थिक असमानता मौजूद है वो भी खास कर ग्रामीण इलाकों में. सरकारी योजनायें यहाँ धरातल पर उतरने से पहले ही भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ जाती हैं. कोरोना महामारी ने हमें एक मौका दिया है कि कैसे हम अपने गांवों का पुनरुद्धार करें , कैसे यहाँ की समस्याओं से निजात पायें. “आत्मनिर्भर भारत” की शुरुआत आत्मनिर्भर गाँव से ही हो सकती है.

 Copyright @ 2020 Authors

ISSN: 2278-4632
Vol-10 Issue-8 No. 1 August 2020

संदर्भ सूची-

---

https://www.bbc.com/news/world-asia-india-52586898

https://www.ndtv.com/india-news/coronavirus-lockdown-in-up-migrant-couple-trying-to-cycle-home-amid-lockdown-run-over-by-car-2225355

https://www.theguardian.com/world/2020/may/24/fifteen-year-old-in-india-cycles-745-miles-home-with-disabled-father-on-bike#:~

https://www.ndtv.com/india-news/coronavirus-a-baby-and-its-dead-mother-at-bihar-station-in-continuing-migrant-tragedy-2235852

https://www.bbc.com/news/world-asia-india-51904019

https://books.google.co.in/books?id=Mm14U_6JVwoC&printsec=copyright&redir_esc=y#v=onepage&q&f=false

https://www.theguardian.com/books/booksblog/2015/jan/05/albert-camus-the-plague-fascist-death-ed-vulliamy
https://www.bbc.com/news/world-asia-india-51904019

वह भी कोई देस है महराज, अनिल यादव, अंतिका प्रकाशन, 2012

Copyright @ 2020 Authors